विष्णु पुराण

अठारह महापुराओं में से एक है, जो हिंदू धर्म के प्राचीन और मध्ययुगीन ग्रंथों की एक शैली है।

यह वैष्णववाद साहित्य संगठित में एक महत्वपूर्ण पंचरात का पाठ है।

विष्णु पुराण की पांडुलिपियों आधुनिक युग में कई संस्करणों में बचे हैं। किसी भी अन्य प्रमुख पुराण्य से अधिक, विष्णु पुराण अपनी सामग्री पंकळकाना प्रारूप में प्रस्तुत करता है – सर्गा (ब्रह्मांड), प्रत्यार्गा (ब्रह्मांडिकी), वाम (देवताओं की पौराणिक वंशावली, संत और राजा), मानववित्त (ब्रह्मांडीय चक्र) और वमनुक्रारीतम (किंवदंतियों विभिन्न राजाओं के समय के दौरान)।

पाठ की कुछ पांडुलिपियों अन्य प्रमुख पुराणों जैसे कि महात्माओं और तीर्थयात्रा पर यात्रा गाइडों पर पाए जाने वाले वर्गों को शामिल नहीं करने के लिए उल्लेखनीय हैं,

लेकिन कुछ संस्करणों में मंदिरों और यात्रा स्थलों पर अध्याय अध्यात्म तीर्थस्थल स्थलों में शामिल हैं।

विष्णु पुराण, पुराने पुराणों में करीब 7,000 छंदों के साथ, छोटे पुराण ग्रंथों में से एक है।

यह मुख्यतः हिंदू भगवान विष्णु और उनके अवतार जैसे कि कृष्ण के आसपास स्थित है,

लेकिन यह ब्रह्मा और शिव की प्रशंसा करता है और यह दावा करता है कि वे विष्णु के साथ हैं।

पुराण, विल्सन कहलाता है, यह पैंथिस्टिक है और इसमें विचार, अन्य पुराणों की तरह, वैदिक मान्यताओं और विचारों पर आधारित हैं।

विष्णु पुराण पहला अध्याय

क्षीर सागर में स्थित त्रिकूट पर्वत पर लोहे, चांदी और सोने की तीन चोटियाँ थीं।

उन चोटियों के बीच एक विशाल जंगल था जिसमें फलों से लदे पेड़ भरे थे।

उस जंगल में गजेंद्र नामक मत्त हाथी अपनी असंख्य पत्नियों के साथ विहार करते अपनी प्यास बुझाने के लिए एक तालाब के पास पहुँचा।

प्यास बुझाने के बाद गजेंद्र के मन में जल-क्रीड़ाएँ करने की इच्छा हुई।

फिर वह अपनी औरतों के साथ तालाब में उतर कर पानी को उछालते हुए अपना मनोरंजन करने लगा।

इस बीच एक बहुत बड़े मगरमच्छ ने गजेंद्र के दायें पैर को अपने दाढ़ों से कसकर पकड़ लिया। इस पर पीड़ा के मारे गजेंद्र धींकार करने लगा।

उसकी पत्नियाँ घबड़ा कर तालाब के किनारे पहुँचीं और अपने पति के दुख को देख आँसू बहाने लगीं।

उनकी समझ में न आया कि गजेंद्र को मगरमच्छ की पकड़ में से कैसे छुड़ायें?

गजेंद्र भी मगरमच्छ की पकड़ से अपने को बचाने के सारे प्रयत्न करते हुए छटपटाने लगा।

गजेंद्र अपने दाँतों से मगरमच्छ पर वार कर देता और मगरमच्छ उछल कर हाथी के शरीर को अपने तेज नाखूनों से खरोंच लेता जिससे खून की धाराएँ निकल आतीं।

हाथी मगरमच्छ की पीठ पर अपनी सूंड चलाता, मगरमच्छ अपनी ख़ुरदरी पूँछ से हाथी पर वार कर देता।

अगर हाथी अपने चारों पैरों से मगरमच्छ को कुचलने की कोशिश करता तो वह पानी के तल में जाकर छिप जाता।

इस पर हाथी किनारे पर पहुँचने के लिए आगे बढ़ता, तब झट से मगरमच्छ हाथी को पकड़ कर खींच ले जाता और उसे पानी में डुबो देता।

इस तरह मगरमच्छ और हाथी के बीच एक हज़ार साल तक लगातार लड़ाई चलती रही।

गजेंद्र अपनी ताक़त पर विश्वास करके हिम्मत के साथ लड़ता रहा, फिर भी धीरे-धीरे उसकी ताक़त घटती गई।

मगरमच्छ तो पानी में जीनेवाला प्राणी है !

पानी के अंदर उसकी ताक़त ज़्यादा होती है ! वह हाथी का खून चूसते दिन ब दिन मोटा होता गया।

हाथी कमजोर हो गया। अब सिर्फ़ उसका कंकाल मात्र रह गया।

मगरमच्छ की पकड़ से अपने को बचा लेना हाथी के लिए मुमकिन न था।

आ़खिर गजेंद्र दुखी हो सोचने लगा, "मैं अपनी प्यास बुझाने के लिए यहाँ पर आया।

प्यास बुझाने के बाद मुझे यहाँ से चला जाना चाहिए था ! मैं नाहक़ क्यों इस तालाब में उतर पड़ा? मुझे कौन बचायेगा?

फिर भी मेरे मन के किसी कोने में यह यक़ीन जमता जा रहा है कि मैं किसी तरह बच जाऊँगा।

इसका मतलब है कि मेरी आशा का कोई आधार ज़रूर होगा। उसी को मैं ईश्वर कहकर पुकारता हूँ।

देवता, भगवान, ईश्वर नामक भावना का मूल बने हे प्रभु ! तुम्हीं सभी कार्य-कलापों के कारण भूत हो !

मुझ जैसे घमण्डी प्राणी जब तक खतरों में नहीं फँसते, तब तक तुम्हारी याद नहीं करते !

दुख न भोगने पर तुम्हारी ज़रूरत का बोध नहीं होता ! तुम तब तक उसे दिखाई नहीं देते,

जब तक वह यह नहीं मानता कि तुम हो, और उसके मन में यह खलबली नहीं मचती कि तुम हो या नहीं।

इस तरह बराबर सोचनेवाले गजेंद्र को लगा कि मगरमच्छ के द्वारा सतानेवाली पीड़ा कुछ कम होती जा रही है !

गजेंद्र ने जब ध्यान करना शुरू किया, तभी मगरमच्छ के दाढ़ों के मसूड़ों में पीड़ा शुरू हुई।

उसका कलेजा काँपने लगा। फिर भी वह रोष में आकर गजेंद्र के पैर को चबाने लगा।

प्राणियों की बुराई और पीड़ा को तुम हरनेवाले हो ! तुम सब जगह फैले हुए हो ! देवताओं के मूल रूप हे भगवान !

इस दुनिया की सृष्टि के मूलभूत कारण तुम हो। मैं यह विश्वास करता हूँ कि अपनी रक्षा करने के लिए मैं जितनी तीव्रता के साथ प्रार्थना करता हूँ, तुम उतनी जल्दी मेरी रक्षा कर सकते हो !

सब प्रकार के रूप धरनेवाले, वाणी और मन से परे रहनेवाले हे ईश्वर ! ऐसे अनाथों की रक्षा करनेवाली जिम्मेदारी तुम्हारी ही है न?

प्राण शक्तियाँ मेरे भीतर से जवाब दे चुकी हैं! मेरे आँसू सूख गये हैं? मैं ऊँची आवाज़ में तुम्हें पुकार भी नहीं सकता हूँ !

मैं अपना होश-हवास भी खोता जा रहा हूँ! चाहे तुम मेरी रक्षा करो या छोड़ दो, यह सब तुम्हारी इच्छा पर निर्भर है।

मेरे अंदर सिर्फ़ तुम्हारे ध्यान को छोड़ कोई भावना नहीं है। मुझे बचाने वाला भी तुम्हारे सिवाय कोई नहीं है !

गजेंद्र सूंड उठाये आसमान की ओर देखने लगा।

मगरमच्छ को लगा कि उसकी ताक़त जवाब देती जा रही है ! उसका मुँह खुलता जा रहा है। उसका कंठ बंद होता जा रहा है।

उधर हाथी की आँखें इस तरह बंद होने लगीं कि उसे अपने अस्तित्व का ही बोध न था। वह एक दम अचल खड़ा रह गया।

उस हालत में विष्णु आ पहुँचे। सारा आसमान उनके स्वरूप से भर उठा। गजेंद्र को लगा कि वह एक अत्यंत सूक्ष्म कण है।

विष्णु ने अपना चक्र छोड़ दियाऔर अभय मुद्रा में अपना हाथ फैलाया।

बड़ी तेज़ गति के साथ चक्कर काटते विष्णु-चक्र ने आकर मगरमच्छ का सर काट डाला।

दर असल मगरमच्छ एक गंधर्व था। उसका नाम 'हुहूश् था। प्राचीन काल में देवल नामक एक ऋषि पानी में खड़े होकर तपस्या कर रहे थे,

तब मगरमच्छ की तरह पानी में छिपते हुए आकर गंधर्व ने उनका पैर पकड़ लिया।

इस पर ऋषि ने उसे शाप दे डाला कि तुम मगरमच्छ की तरह इस पानी में पड़े रहो ! अब विष्णु-चक्र के द्वारा उसका शाप जाता रहा।

मगरमच्छ से छुटकारा पानेवाले गजेंद्र को तालाब से बाहर खींचकर विष्णु ने अपनी हथेली से उसके कुँभ-स्थल को स्पर्श किया।

उस स्पर्श की वजह से गजेंद्र अपनी खोई हुई ताक़त पाने के साथ पूर्व जन्म का ज्ञान भी प्राप्त कर सका।

गजेंद्र पिछले जन्म में इंद्रद्युम्न नामक एक विष्णुभक्त राजा थे।

विष्णु के ध्यान में मग्न उस राजा ने एक बार ऋषि अगस्त्य के आगमन का ख़्याल न किया।

ऋषि ने क्रोध में आकर उसे शाप दिया कि तुम अगले जन्म में मत्त हाथी बनकर पैदा होगे।

उसी दिन गजेंद्र के रूप में पैदा होकर उसने मुक्ति प्राप्त की।

गजेंद्र मोक्ष की कहानी नैमिशारण्य में होनेवाले सत्र याग में पधारे हुए शौनक आदि मुनियों को सूत महर्षि ने सुनाई।

मुनियों ने सूत महर्षि से कहा, ''मुनिवर, गजेंद्र मोक्ष की कहानी हमें तो सिर्फ़ एक हाथी की जैसी मालूम नहीं होती,

बल्कि सारे प्राणि कोटि से संबंधित मालूम होती है।

ख़ासकर कई बंधनों और मुसीबतों में फँसकर तड़पनेवाले मानव जीवन से संबंधित लगती है।

इसके जवाब में सूतमहर्षि बोले, ''हाँ, गजेंद्र मोक्ष की कहानी श्लेषार्थ से भरी हुई है।

उसका अन्वय जो जिस रूप में चाहे कर सकता है। काल तो विष्णु के अधीन में है।

इसलिए काल-चक्र के परिभ्रमण में कई कठिनाइयाँ और समस्याएँ हल होती जाती हैं।

मुनियों ने पूछा, ''मुनिवर, गजेंद्र मोक्ष के आधार पर हमें यह मालूम होता है कि प्रत्येक कार्य का कारणभूत सर्वेश्वर विष्णु हैं।

ऐसे महाविष्णु की कहानी पूर्ण रूप से सुनने की इच्छा हमारे मन में जाग रही है। हम आपके सामने बच्चों के समान हैं।

इसलिए हम आपसे प्रार्थना करते हैं कि आप हमारी समझ में आने लायक़ सरल शैली में विष्णु कथा की सारी बातें समझा दें।

आपने महर्षि व्यास के द्वारा समस्त पुराण, इतिहास और उनके मर्म को भी जान लिया है।

इसलिए आप ही वे कहानियाँ सुनाकर हमको कृतार्थ कर सकते हैं।

मुनियों की बातें सुनकर सूत मुनि ख़ुश हुए और बोले, ''हाँ, ज़रूर सुनाऊँगा।

महर्षि व्यास ने विष्णु से संबंधित अनेक लीलावतारों की विशेषताओं को महा भागवत के रूप में रचा और अपने पुत्र शुक को सुनाया।

विष्णु पुराण सुनकर भव सागर से तरने की इच्छा रखनेवाले महाराजा परीक्षित को शुक महर्षि ने सुनाया।

गजेंद्र की रक्षा करने के लिए प्रकट हुए विष्णु का अवतार आदि मूलावतार माना गया।

भगवान विष्णु ने कई अवतार लिए; उनमें विकास की दशाओं के अनुसार दशावतार नाम से प्रसिद्ध दस अवतार ज़्यादा मुख्य हैं।

नार का अर्थ नीर है। विष्णु जल के मूल हैं, इसलिए वे नारायण कहलाये। नारायण से ही नीर या जल का जन्म हुआ।

जल से प्राणी पैदा हुए। विष्णु मछली के रूप में अवतरित हुए; दशावतारों में वही पहला मत्स्यावतार है।

विष्णु जल से भरे नील मेघ के रंग के होते हैं। मेघ के अंदर जैसे बिजली छिपी हुई है, उसी प्रकार विष्णु स्वयं तेजोमय हैं,

उनके भीतर से उत्पन्न जल भी तेज से भरे रहकर गोरे रंग का प्रकाश बिखेरता रहता है। वही जल कारणोदक क्षीर सागर है।

क्षीर सागर में अनंत रूपी काल (समय) शेषनाग के रूप में कुंडली मारे लेटा रहता है। शेषनाग के एक हज़ार फण हैं।

अनन्त शेषनाग पर शेषशायी के रूप में विष्णु लेटे रहते हैं। उनकी नाभि में से एक लंबे नाल के साथ एक पद्म ऊपर उठा।

उसी पद्म से ब्रह्मा का उदय हुआ। ब्रह्मा ने सभी प्राणियों की सृष्टि की।

अनंतकाल युगों के रूप में चलता रहता है। कृत, त्रेता, द्वापर और कलियुग – इन चारों को मिलाकर एक महा युग होता है।

एक हज़ार महायुग मिलकर एक कल्प होता है। एक कल्प ब्रह्मा का एक दिन होता है (रात का व़क्त इसमें शामिल नहीं है)

दिन के समाप्त होते ही उन्हें नींद आ जाती है। वही कल्पांत है। उस व़क्त चारों ओर गहरा अंधेरा छा जाता है।

विष्णु से निकली संकर्षण की अग्नि सब को जला देती है। झंझावात चलने लगते हैं,

तब भयंकर काले बादल हाथी की सूंडों जैसी जलधाराएँ लगातार गिराने लगती हैं।

महासमुद्र में आसमान को छूनेवाला उफान होता है। भू, भुवर और स्वर्ग लोक डूब जाते हैं।

चारों तरफ़ जल को छोड़ कुछ दिखाई नहीं देता। यही ब्रह्मा के सोने की रात प्रलयकाल है।

यही कल्पांत का समय है।

सत्यव्रत नामक राजर्षि नदी में नहाकर नारायण का ध्यान करके जब वे अर्घ्य देने को हुए तब उनकी अंजलि में सोने के रंग की एक छोटी मछली आ गई।

सत्यव्रत उस मछली को नदी में छोड़ने जा रहे थे, तब वह मछली बोल उठी, ''हे राजन,

हमारी मछली की जाति अच्छी नहीं होती, छोटी मछलियों को बड़ी मछलियाँ खा जाती हैं।

अगर उनसे बच भी जाये, मछुआरे जाल फेंककर पकड़ लेते हैं।

इसलिए मैं आपकी शरण माँगने अंजलि में आ गई हूँ। कृपया से मुझे छोड़ न दीजियेगा।

सत्यव्रत मछली को अपने कमंडलु में रखकर अपने नगर में ले गये।

वे महाराजा के रूप में राज्य करते हुए बड़ी तपस्या करनेवाले एक राजर्षि थे। विष्णु के परम भक्त और बड़े ज्ञानी थे।

कमण्डलु के भीतर वाली छोटी मछली दूसरे दिन तक बड़ी हो गई और छटपटाते आर्तनाद करने लगी, ''महाराज, मुझको कमण्डलु से निकाल कर बड़ी जगह पहुँचा दीजिए।

इस पर मछली को बड़े नांद में छोड़ दिया गया। वह थोड़ी ही देर में बहुत बड़ी हो गई,

तब सत्यव्रत ने उसे एक तालाब में डाल दिया। मछली बराबर बढ़ती गई,

तब उसे तालाब से बड़ी नदी में, नदी से समुद्र में पहुँचाया गया।

इस पर मछली ने पूछा, ''हे राजर्षि, मैं आपकी शरण में आया हूँ।

ऐसी हालत में क्या आप मुझे समुद्र में छोड़कर चले जायेंगे? क्या मगरमच्छ और तिमिंगल मुझकोनिगल नहीं जायेंगे?

सत्यव्रत ने कहा, "हे महामीन, बताओ, मैं इससे बढ़कर तुम्हारे लिए क्या कर सकता हूँ?

पल भर में सौ योजन बढ़नेवाले तुमको भला कौन प्राणी निगल सकता है !

विष्णु पुराण अध्याय पहला समाप्त...

विष्णु पुराण दूसरा अध्याय

सत्यव्रत की बातें सुनकर मछली समुद्र के बीच पहुँची, एक महा पर्वत की भांति समुद्र की लंबाई तक फैलकर बोली, "सत्यव्रत, देखा, तुम्हारी वाणी अचूक निकली और अचूक रहेगी। न मालूम मैं यों बढ़ते-बढ़ते क्या से क्या हो जाऊँगी?

सत्यव्रत ने हाथ जोड़कर प्रणाम किया, और उसकी स्तुति करने लगा, "मत्स्यावतार वाले हे नारायण ! आप रक्षा की माँग करने आये और मेरी रक्षा करने के लिए आपने मत्स्यावतार लिया। आप मत्स्य के रूप में अवतरित लीलामानुष स्वरूप हैं ! आपकी लीलाओं को समझने की ताक़त मेरे अन्दर कहाँ है?

इसके जवाब में मत्स्यावतार में रहनेवाले विष्णु ने कहा, "हे राजन्, सात दिनों के अंदर कल्पांत होनेवाला है। प्रलयकाल के जल में सारी दुनिया डूब जाएगी। लेकिन ज्ञान, औषधियों और बीजों का नाश नहीं होना चाहिए। तुम्हारे वास्ते एक बड़ी नाव गहरे अंधेरे में चिराग की तरह जलती आएगी। उसके अन्दर सप्त ऋषि होंगे ! वह रोशनी उन्हीं लोगों की है !

तुम अपने साथ औषधियों और बीजों के ढेर को नाव में पहुँचा दो। मेरे सिर पर जो सींग हैं, उस पर नाव को कस कर थामे रहूँगा और उसके डूबने से मैं बचाऊँगा। इसी के वास्ते मैंने इस रूप में अवतार लिया है। इस व़क्त ब्रह्मा निद्रा

में निमग्न हैं, उनके जागने तक यह नाव ध्रुव नक्षत्र को दिशा सूचक बनाकर यात्रा करेगी। अगले कल्प में तुम वैवस्वत के नाम से मनु बनोगे। सत्यव्रत ने विष्णु की आज्ञा को शिरोधार्य कर नत मस्तक हो उन्हें प्रणाम किया।

मत्स्यावतार अपने चार पंखों को फड़-फड़ाते, ऊँची लहरों को चीरते समुद्र के अन्दर चला गया।

ब्रह्मा गहरी नींद सो रहे थे। अंधकार में प्रलय तांडव हो रहा था।

हयग्रीव नामक सोमकासुर समुद्र तल से ऊपर आया, फिर अचानक चमगीदड़ की तरह ब्रह्मा के सत्य लोक में उड़कर चला गया।

ब्रह्मा जब नींद के मारे पहले जंभाइयाँ ले रहे थे, तब उनके चारों मुखों से सफ़ेद, लाल, पीले और नीले रंगों में चमकनेवाले चार वेद बाहर निकले और नीचे गिर गये। हयग्रीव ने उन वेदों को उठा ले जाकर समुद्र के अन्दर छिपा दिया।

हयग्रीव देवताओं और विष्णु का भी ज़बर्दस्त दुश्मन था। वेदों के बिना ब्रह्मा सृष्टि की रचना नहीं कर सकते थे। हर एक कल्प में विष्णु अच्छाई को बढ़ावा देकर उसका विकास करना चाहते थे। उनके इस संकल्प को बिगाड़ देना ही हयग्रीव का लक्ष्य था।

प्रलय कालीन समुद्र पृथ्वी को डुबो रहा था। उस व़क्त सत्यव्रत को उस गहरे अंधेरे में दूरी पर नक्षत्र की तरह टिमटिमाने वाली रोशनी में एक नाव दिखाई दी। वही सप्त ऋषियों की कांति से भरी नाव थी।

सत्यव्रत ने औषधियों तथा बीजों को नाव के अंदर पहुँचा दियाऔर नारायण की स्तुति करते उसी नाव में यात्रा करने लगा। मत्स्यावतार की नाक पर एक लंबा सींग था। नक्षत्र की तरह चमकने वाले उस सींग से लिपट कर एक महा सर्प प्रलयकालीन आंधी को निगल रहा था। मत्स्यावतार अपने पंखों से लहरों को रोकते समुद्र को चीरते नाव को सुरक्षित ले जा रहा था। ध्रुव नक्षत्र को मार्गदर्शक बनाकर वह नाव फूल की तरह तिरते आगे बढ़ रही थी।

समुद्र के गर्भ में छिपाये गये वेदों का पहरा देते सोमकासुर समुद्र के भीतर टहल रहा था। चारों वेद चार शिशुओं के रूप में बदलकर किलकारियाँ कर रहे थे।

मत्स्यावतार वेदों की खोज करते हुए आगे चल पड़ा। मत्स्यावतार को देखते ही सोमकासुर घबरा गया; फिर भी हिम्मत बटोर कर वह अपना कांटोंवाला गदा हाथ में ले जूझ पड़ा।

उस समय तक विष्णु का अवतार मत्स्य के रूप में कमर तक हो गया था। उसमें चारों हाथ निकल आये थे। देखते-देखते मत्स्यावतार और सोमकासुर के बीच भीषण लड़ाई छिड़ गई।

सोमकासुर समुद्र तल में पहुँचकर भागने लगा, इस पर विष्णु ने अपने चक्र से उसे टुकड़े-टुकड़े कर दिया।

विष्णु शिशुओं के रूप में स्थित वेदों को अपनी बगग में दबाकर पानी के ऊपर आ गये। वे चारों शिशु विष्णु के कंठहार में शोभा देनेवाले श्रीवत्स तथा कौस्तुभ मणियों के साथ नन्हें हाथों से खेलते हुए क़िलकारियाँ मार रहे थे। चारों बच्चे सफ़ेद, लाल, पीले व नीले रंग की कांतियों से चमक रहे थे। विष्णु के हाथों में शंख और चक्र शोभायमान थे।

विष्णु के मत्स्यावतार को देख ऋषि और सत्यव्रत तन्मय हो हाथ उठाकर उनकी स्तुति करने लगे। प्रलय तांडव शांत हो गया था, जहाँ-तहाँ भूमि दिखाई देने लगी थी। नाव भी अपने लक्ष्य पर पहुँच गई।

ब्रह्मा के लिए दिन और रात का समय बराबर था। उनकी निद्रा का समय पूरा होने को था। आसमान में प्रकाश की किरणें फूट रही थीं। नया कल्प शुरू हो रहा था। सरस्वती देवी पहले जाग उठीं। उन्होंने अपनी वीणा पर भूपाल राग का आलाप किया।

ब्रह्मा जाग उठे। उन्हें लगा कि उनके चारों सिरों में कोई अशांति फैली है। फिर परख कर देखा, वेद गायब थे। इसी चिंता में ब्रह्मा कुछ परेशान थे, तभी विष्णु ने मत्स्यावतार में प्रत्यक्ष हो उनके हाथ में वेद सौंप दिये।

ब्रह्मा ने विष्णु के मत्स्यावतार को जी भरकर देखा, तब अपने हाथ जोड़कर चारों मुखों से उनकी स्तुति की

हे नारायण ! जो व्यक्ति आपके मत्स्यावतार का ध्यान करता है, उसकी सारी विपदाएँ इस तरह हट जायेंगी जैसे प्रलय के रूप में उपस्थित सारी विपदाएँ दूर हो जाती हैं और उनका अज्ञान रूपी अंधकार हट जायेगा।

विष्णु के द्वारा मत्स्यावतार लेने का कार्य सफल हो गया था, इसलिए वे अंतर्धान होकर अपने निवास वैकुंठ में पहुँचे।

ब्रह्मा ने वेद लेकर सृष्टि की रचना शुरू की। सत्यव्रत श्राद्धदेव वैवस्वत के नाम से मनु हुए।

सप्त ऋषि आसमान में अपने-अपने स्थानों में पहुँचकर सप्तर्षि मण्डल के रूप में प्रकाशित होते हुए, ध्रुव की प्रदक्षिणा करते घूमने लगे। यों सूत महर्षि ने कहानी सुनाई। इस पर मुनियों ने पूछा, ‘‘सूत महर्षि, हम लोग ध्रुव की कहानी सुनना चाहते हैं!

सूत मुनि यों सुनाने लगे रू इस विशाल विश्व में सबसे ज़्यादा ऊँचा स्थान ही ध्रुव मण्डल है। वही विश्व स्वरूप विष्णु के शिर का स्थान है।

ऐसा ऊँचा स्थान पानेवाले ध्रुव उत्तानपाद नामक एक राजा के पुत्र थे । ध्रुव की माता सुनीति राजा उत्तानपाद की ज्येष्ट पत्नी थी, सुरुचि छोटी रानी थी। राजा सुरुचि को ज़्यादा प्यार करते थे।

एक दिन राजा उत्तानपाद छोटी रानी सुरुचि के पुत्र उत्तम को अपनी जांघ पर बिठाकर प्यार जता रहे थे। तभी वहाँ पर ध्रुव आ पहुँचा ! उसके मन में भी अपने पिता की जाँघ पर बैठने की इच्छा थी। वह बड़ी लालसा से अपने पिता की आँखों में देखता रहा। उस व़क्त सुरुचि वहीं पर थी। राजा सुरुचि से डर कर ध्रुव को देखकर भी अनदेखा सा कर गये। ध्रुव ने सोचा था कि उसके पिता उसको भी अपने छोटे भाई के जैसे अपनी जाँघ पर बिठायेंगे। पर ऐसा न होते देख उसे रोना आया। उसके गालों पर आँसू मोती जैसे चमक उठे।

ध्रुव की हालत देख सुरुचि खिल-खिला कर हँस पड़ी और बोली, ‘‘अरे, बदक़िस्मत के बच्चे ! चाहे तुम ज़िंदगी भर तपस्या क्यों न करो, मेरे पुत्र के समान तुम्हें अपने पिता की जांघ पर बैठने का भाग्य प्राप्त न होगा। मेरे पेट में पैदा होगे तभी तुम्हें यह सौभाग्य प्राप्त होगा। हाँ, तुम तो जब देखो, नारायण का संकीर्तन किया करते हो ! अब तपस्या करके उसी नारायण से पूछकर देखो, कहीं वे तुम को ऐसा सौभाग्य प्रदान कर सकते हैं या नहीं? यों सुनीति ने ध्रुव का मज़ाक उड़ाया।

बालक ध्रुव का मन कचोट उठा। उसका दुख उमड़ पड़ा। उसका क्रोध खौल उठा। उसके मन में सुरुचि की हत्या करने की इच्छा जगी, लेकिन दूसरे ही क्षण उसे सुरुचि एक उत्तम उपदेशिका सी लगी, मानो उसे यह सलाह देती हो,

‘‘बेटा, नारायण पर विश्वास करो। तपस्या करो। तब ध्रुव को लगा कि उत्तम कुमार ऐसे महान उपदेश पाने का सौभाग्य न रखनेवाला एक आभागा है?

राजा उत्तानपाद उसे अंधेरे रूपी जाल में फंसकर छटपटाने वाले हिरण जैसे लगे। इसके बाद ध्रुव ने सुरुचि को इस प्रकार प्रणाम किया, जैसे गुरु का उपदेश पाने के बाद शिष्य गुरु को प्रणाम करता है।तब वहाँ से चल पड़ा। ध्रुव के इस व्यवहार पर चकित हो सुरुचि अपने मन में सोचने लगी, ‘‘लड़का तो भला मालूम होता है ! गालियाँ देने के बाद भी प्रणाम करके चला गया। प्रणाम न करे तो करेगा ही क्या? मेरे सामने मुँह खोलने की उसकी हिम्मत है? या उसकी माँ हिम्मत कर सकती है?

आँसू बहाते लौट आये ध्रुव को देख, दासियों के द्वारा सारी हालत जानकर सुनीति रो पड़ी, तब बोली, ‘‘हाँ, बेटा, बात सच है। दासी जैसी ही निकृष्ट जीवन बितानेवाली मेरे गर्भ से तुम क्यों पैदा हुए? तुम्हारी मौसी की बातें सच हैं ! तुम्हारे लिए और मेरे वास्ते भी उस नारायण को छोड़ कोई दूसरा सहारा नहीं है।

अपनी माता की बातें सुनने पर ध्रुव के मन को शांति मिली। बोला, ‘‘माँ, मैं तपस्या करने जा रहा हूँ। मुझे कृपया आशीर्वाद दो।

क्या बोला? तुम तपस्या करोगे? तब तो नारायण से सुरुचि के गर्भ से पैदा होने का वर, माँग लो। सुनीति ने कहा।

माँ, ऐसी बातें अपने मुँह से न निकालो ! मैं तुम्हारा पुत्र हूँ! हमें कभी अपने को छोटा मानना नहीं चाहिए ! यह तो आत्महत्या के समान है। मैं यह साबित करना चाहता हूँ कि ध्रुव की माता कैसी भाग्यशालिनी है? दिशा हीनों के लिए दिग्दर्शक बनने का वर मैं नारायण से माँग लूँगा। यह कहकर ध्रुव उसी व़क्त घर से चल पड़ा।

रास्ते में नारद मुनि से बालक ध्रुव की मुलाक़ात हुई। नारद ने पूछा, ‘‘हे ध्रुव कुमार ! लगता है कि तुम खेलने के लिए चल पड़े?

स्वामी, मैं तपस्या करने जा रहा हूँ! ध्रुव ने जवाब दिया।

ओह, तपस्या नामक कोई खेल भी है? तब तो खूब खेलो, बेटा ! नारद ने मजाक़ किया।

मुनिवर, यह कोई खेल नहीं ! सचमुच मैं तपस्या करने के लिए ही जा रहा हूँ। ध्रुव ने स्पष्ट शब्दों में कहा।

उफ़ ! यह बात है! इस छोटी सी बात को लेकर तुम तपस्या करने जा रहे हो? मेरे साथ चलो, मैं देखूँगा कि तुम्हारे पिता तुमको अपनी जांघ पर क्यों कर नहीं बिठाते? नारद ने कहा।

स्वामी, मैं किसी की दया नहीं चाहता। सबसे उत्तम नारायण का अनुग्रह मुझे चाहिए। इसी वास्ते मैं तपस्या करने के लिए जंगल में जा रहा हूँ। ध्रुव ने कहा।

तपस्या करना कोई हँसी-खेल की बात नहीं, बेटा ! जंगल में शेर, बाघ वगैरह खूँख्वार जानवर होते हैं! धूप, जाड़ा और बरसात का सामना करना पड़ता है ! मेरी बात मानकर घर चलो। नारद ने समझाया।

मुनिवर, मैं क्षत्रिय हूँ ! अपमान सहते हुए ज़िंदा नहीं रह सकता ! क्या आप मुझे कायरता की दवा पिलाने आये हैं? ध्रुव ने पूछा।

बेटा ध्रुव ! मैंने तुम्हारा दृढ़ निश्चय जानने के लिए ही ये बातें कहीं ! एक जमाने में मैंने भी अनाथ बालक बनकर अनेक अपमान और अत्याचारों का शिकार हो अंत में तपस्या की थी। तुम मधुवन में जाकर 'ॐ नमो नारायण !श् का जाप करते तपस्या करो; मैं तुमको आशीर्वाद देता हूँ ! अपने कार्य में सफल होकर लौट आओ ! नारद ने समझाया।

ये बातें सूत मुनि के मुँह से सुनकर मुनियों ने पूछा, ''मुनीन्द्र ! नारद ने अपमान और अत्याचारों का सामना कैसे किया? नारद का वृत्तांत सुनने का कुतूहल हमारे मन में पैदा हो रहा है !

विष्णु पुराण दूसरा अध्याय समाप्त....

विष्णु पुराण तीसरा अध्याय

सूतमहर्षि ने नारदमुनि की कहानी सुनाना प्रारंभ किया – पिछले जन्म में नारद ने एक दासी-पुत्र के रूप में जन्म लिया था। वह दासी एक भक्त के घर में काम किया करती थी। उस भक्त के घर में सदा ऋषि-मुनि, साधु-संत अतिथि-सत्कार पाया करते थे। बालक नारद उन ज्ञानियों की सेवा में लगा रहता था। जरूरत के व़क्त उन्हें पानी पिलाया करता था। विष्णु भगवान की महिमाओं की चर्चा भी बड़ी श्रद्धा व भक्ति से सुनता था। नीर याने पानी देनेवाले बालक का नामकरण "नारद करके वे लोग इसी नाम से उसे पुकारा करते थे।

इस बीच नारद की माँ साँप के डँसने से मर गई। बालक नारद को अपने पिता का बिलकुल पता न था। उसके साथी नारद को दासी-पुत्र और अनाथ बालक कहा करते थे। कुछ ही दिनों में उस मकान के मालिक का स्वर्गवास हो गया ।

नारद को कहीं आश्रय नहीं मिला। वह इधर-उधर भटकता था। भूख लगने पर यदि वह किसी मकान के सामने जाकर खड़ा हो जाता तो लोग उसे भगा देते थे और गालियां देते थे कि यह बालक ऐसा पापी है जिसे अपने पिता का भी पता नहीं है। नारद साधु स्वभाव का था। इसलिए नटखट बच्चे उसपर पत्थर फेंकते और उसे सता कर आनंद का अनुभव करते थे।

गाँव के लोगों से तंग आकर नारद सोचने लगा – "इन मनुष्यों के बीच मेरा जन्म क्यों हुआ है? मैंने कौन-सा अपराध किया है? ये लोग मेरे प्रति ऐसे अत्याचार क्यों करते हैं? आ़खिर कीड़े-मकोड़े, जंगल के जानवर भी मजे से जी रहे हैं। यों सोचते हुए नारद जंगल की ओर चल पड़ा। उसे ऋषि मुनियों की बातें याद हो आईं।

मुझे भी तपस्या करके देवताओं के बीच जन्म लेना है! यों निश्चय कर नारद ने तपस्या करना शुरू किया।

अनाथों का जो रक्षक है, जो सारे जगत का पिता है, वही मेरे लिए भी पिता है। वह मुझे कुछ भी बनाये, पसंद है। इस प्रकार सोचते नारद ने समय का ख्याल किये बिना भयंकर तपस्या शुरू कर दी । नारद की तपस्या पूर्ण हो गई। उसके भीतर एक तेज ने प्रवेश किया।

एक ज्योति के रूप में प्रत्यक्ष होकर विष्णु भगवान ने कहा- "वत्स नारद, तुम मेरे अन्दर विलीन होने जा रहे हो! इसके बाद तुम ब्रह्मा के मानस पुत्र के रूप में जन्म धारण करोगे! तुम चिरंजीवी होकर तीनों लोकों का भ्रमण करते हुए सदा मेरी स्तुति किया करोगे!

इसके बाद नारद ने विष्णु के अंश को लेकर ब्रह्मा के मानस पुत्र के रूप में जन्म लिया और देवमुनि के रूप में पूजा पाने लगे। विष्णु भगवान की लीलाओं के अवतारों में एक नारद का अवतार भी बताया गयाहै!

ऐसे नारद मुनि से उपदेश पाकर ध्रुव तेज गति के साथ आगे बढ़े चले जा रहे थे । उस समय उत्तमकुमार रोते हुए आ पहुँचा और ध्रुव के सामने हाथ फैला कर उनको रोकते हुए बोला- "भैया, आप कृपया जंगल में मत जाइये! आप जंगल में चले जायेंगे तो मैं किसके साथ मिलकर हरि का भजन करूँगा? मेरी माताजी ने आप को डांटा, पर मैंने क्या किया है? मुझ पर आप क्यों नाराज़ होते हैं?

आप रुक जाइये। यों कहते हुए उत्तम फूट-फूट कर रोने लगा।ध्रुव ने उत्तम कुमार के गले लगकर समझाया- "मेरे छोटे भैया! मेरी माताजी ने मुझे जन्म दिया। मुझे क्या यह साबित नहीं करना है कि मेरी माताजी भी महान हैं? इसीलिए मैं जा रहा हूँ!उत्तम बोला- "तब तो मैं भी आप के साथ चलूँगा! आप तपस्या में लग जाइये। मैं आपके लिए कंद-मूल – फल लाया करूँगा।ऐसा करने पर तुम्हारी माँ रोयेंगी! मेरे छोटे भाई! मैं तुम्हारा बड़ा भाई हूँ। इसलिए तुम्हें मेरी बात माननी ही पड़ेगी। जाओ!ध्रुव ने कहा।ध्रुव के मुँह से ये बातें सुनकर उत्तमकुमार वहीं पर लुढ़क पड़ा और रोने लगा। सुरुचि आकर उसे समझाने लगी। इसपर उत्तम गुस्से में आकर बोला-"माँ, तुम मुझे छुओ मत! तुम्हारी वजह से ही बड़े भैया जंगल में जा रहे हैं!

सुरुचि लज्जा के मारे सर झुकाकर अपने को कोसने लगी-"मैं पापिन हूँ! मेरे ही कारण यह सब हुआ । इतने में राजा उत्तानपाद पहुँचकर बोले- "ध्रुव! तुम रुक जाओ! यह सब मेरी मंद बुद्धि की वजह से ही हुआ है। मेरा राज्य तुम्हारा है। वापस चलो!

इस बीच ध्रुव काफी दूर तक चले गये थे। नारद ने सुनीति से कहा- "माताजी, तुम्हारे गर्भ से एक रत्न जैसा पुत्र पैदा हुआ है। तुम अपने बेटे के बारे में बिलकुल चिंता मत करो! नारायण स्वयं उसकी रक्षा करेंगे। फिर उत्तानपाद की ओर मुड़कर नारद बोले- "राजन्, हम सबको इस बात पर खुश होना चाहिए! आपके पिता और ध्रुव के दादा स्वायंभुव मनु के वंश के लिए भी बालक ध्रुव अपार यश का कारण बनेगा। इसमें किसी का कोई दोष नहीं है। यह श्रीमन्नारायण का संकल्प है! यों समझाकर नारद मुनि ने सब को शांत किया।

मधुवन में बैठकर ध्रुव "ओम् नमोनारायणाय का मंत्र जापते तपस्या कर रहे थे। यमुनानदी उस मंत्र में श्रुति मिला रही थी। ध्रुव की तपस्या से तीनों लोक कांपने लगे।

कोई यदि कहीं भी तपस्या करता हो, तो इंद्र यह सोच कर डरते हैं कि कहीं वह तप करके उनके पद की कामना न कर बैठे। इस डर से उनके तप में विघ्न डालने के लिए वे भयंकर इंद्रजाल रचा करते हैं। इसी प्रकार इंद्र ने अपने वज्रायुध को हिला कर आंधी-तूफान और बिजली गिराकर भयंकर उत्पात मचाये; पर ध्रुव थोड़ा भी विचलित न हुए। इस पर इंद्र ने पत्थरों की वर्षा शुरू की। मगर ध्रुव के सर पर घूमते हुए विष्णुचक्र ने उन पत्थरों को दूर फेंक दिया।

उस समय नारद ने जाकर इंद्र को समझाया – "आप ने ध्रुव को साधारण बालक मात्र समझा है। आप उनका कुछ भी बिगाड़ नहीं सकते। आपको व्यर्थ में अपमानित होना पड़ेगा। इंद्रपद तो ध्रुव के लिए घास के तिनके के बराबर है।

अंत में ध्रुव की तपस्या पर प्रसन्न हो विष्णु भगवान प्रत्यक्ष हुए। ध्रुव विष्णु के पैरों से लिपटकर अपार आनंद के मारे मूक रह गये। वे अपने मन में सोचने लगे – "भगवान! मैं पूर्ण हृदय से आपकी स्तुति करना चाहता हूँ। लेकिन मैं एक छोटा बालक हूँ! आप की स्तुति करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं!

इस पर विष्णु ने अपने शंख को ध्रुव के गालों पर छुआ दिया। दूसरे ही क्षण वेदों के तत्वों से भरे स्तोत्र-पाठ साम गान के रूप में ध्रुव के मुँह से निकलने लगे। विष्णु ने मंदहास करते हुए पूछा- "ध्रुव! माँग लो, तुम क्या चाहते हो?

ध्रुव भक्तिपूर्वक बोला-"हे परम पुरुष! जैसे भौंरा कमल से हमेशा लगा रहता है, वैसे ही सदा आप के मधुर मंदहास वाले मुख पद्म को देखते रहने की मेरी इच्छा है! इससे बढ़कर मैं कुछ नहीं चाहता!

अच्छी बात है! लेकिन पहले तुम अपने राज्य में जाकर धर्म का पालन करते हुए शासन करो। इसके बाद तुम मेरे विश्वरूप का शिरो भाग बने ध्रुव पद पर पहुँच जाओगे। कल्पांतों के बाद भी तुम उस अचल पद को ग्रहण कर सदा प्रकाशमान रहोगे। यों समझा कर विष्णु भगवान अंतर्धान हो गये।

इसीलिए ध्रुव को अनुग्रह प्रदान करनेवाले विष्णु का अवतरण 'ध्रुव नारायणावतारश् कहा गया है।

इसके बाद ध्रुव अपनी महिष्मती पुरी में आ गये। उत्तानपाद ध्रुव को अपना राज्य सौंप कर तपस्या करने चले गये।

उत्तमकुमार का अभी तक विवाह नहीं हुआ था। राजधर्म के अनुसार जंगली जानवरों से जनता की रक्षा करने के लिए वह शिकार खेलने गया। हिमालय के पहाड़ी जंगलों में दुष्ट यक्षों ने उस पर हमला करके उसको मार डाला।

अपने पुत्र की मृत्यु पर सुरुचि दुखी हो वहाँ पर पहुँची और जंगल के दावानल में फंसकर भस्म हो गई।

ध्रुव ने यक्षों का नाश करने के लिए यक्षनगर अलकापुरी को घेर लिया। मायावी यक्षों ने अपनी क्षुद्र मायाओं का उन पर प्रयोग किया। ध्रुव ने नारायण अस्त्र के द्वारा मायाओं को विफल बनाकर उनको हरा दिया। यक्ष-राज कुबेर ध्रुव की शरण में आये। उनसे मैत्री करके उनको संपति देकर वापस भेज दिया।

ध्रुव के कई पुत्र हुए। उन्होंने अनेक वर्षों तक आदर्श शासन द्वारा स्वायंभुव मनुवंश को यश प्रदान किया। अनेक वर्षों तक शासन करने के बाद ध्रुव ने अपने ज्येष्ठ पुत्र का राज्याभिषेक किया और वे बदरिकाश्रम में चले गये। वहाँ पर भगवान विष्णु का ध्यान करते हुए स्वर्ण शरीर को प्राप्त किया।

भगवान विष्णु के आदेश पर उनके सेवक एक विमान ले आये। वे लोग भी देखने में विष्णु के समान थे और उनके भी चार-चार हाथ थे।

ध्रुव उन दूतों से बोले- "मेरी माताजी के लिए जो पद प्राप्त नहीं है, उसकी मुझे भी ज़रूरत नहीं। इस पर विष्णु के दूतों ने उनके आगे एक दिव्य विमान में जानेवाली सुनीति को दिखाया। इसे देख ध्रुव प्रसन्न हो उठे। वे विमान पर सवार हो ग्रह मण्डल, नक्षत्र मण्डल तथा सप्तर्षि मण्डल को पारकर ध्रुव पद पर पहुँचे। ध्रुव मण्डल को विष्णु पद भी कहते हैं। विष्णु का निवास वैकुण्ठ भी वहीं पर है।

ध्रुव देति में गोलोक भी होता है। गोलोक में विष्णु प्रकृति स्वरूपिणी राधादेवी के साथ वेणुगान करते हुए आनंद भोगते हैं। गोलोक के ऊपर गहरा अंधकार छाया रहता है। उस अंधकार के पार विष्णु वैकुण्ठवासी बने प्रकाशमान होते हैं! ध्रुव सदा विष्णु को देखते उज्ज्वल कांति से द्युतिमान हो उठे। खूंटे से बंधी गाय की भांति सप्तर्षि मण्डल उनकी प्रदक्षिणा किया करता है। समस्त ग्रह गणों से पूर्ण शिशुमार चक्र उनके नीचे परिभ्रमण करता रहता है।

गोलोक के नीचे ब्रह्मा का निवास सत्यलोक, तपलोक, जनलोक, महलोक, स्वलोक, भुवलोक, भूलोक, नामक सात ऊर्ध्वलोक, तथा भूलोक के नीचे अधोलोक कहलानेनाले अतल, वितल, सुतल, रसातल, तलातल, महातल और पाताल लोक ये सातों मिलाकर चौदह लोकों के ऊपर विश्व के शिवराग्र पर ध्रुव समस्त दिशाओं के लिए दिशासूचक बनकर अचल पद नक्षत्र के रूप में प्रकाशमान रहते हैं। लगन हो तो छोटे-बड़े सभी कार्य साधे जा सकते हैं। इसका प्रमाण पांच साल की उम्र में ही तप करने जानेवाला ध्रुव है।

ध्रुव की कहानी समाप्त कर सूतमहर्षि फिर सुनाने लगेःअगर मत्स्य केवल जलचर है तो कच्छप यानी कछुआ जल और भूमि पर भी चलता है। जल में से प्राणी भूमि पर आ गया यानी जलचर की दशा से भूचर तक का विकास हुआ। इसीलिए कछुए के रूप में विष्णु अवतरित हुए जो दशावतारों में दूसरा अवतार है।

इन शब्दों के साथ सूतमुनि ने कूर्मावतार की कहानी शुरू कीः

देवता व राक्षस क्षीर सागर का मंथन करके अमृत पाने के लिए तैयार हो गये। बाहुबल और संख्या की दृष्टि से भी शक्तिशाली बने राक्षसों ने सोचा कि अगर अमृत प्राप्त होगा तो सारा अमृत उन्हीं लोगों का हो जाएगा।

राक्षसों को अमृत के द्वारा अगर अमरत्व प्राप्त हो जाएगा तो हमारा क्या नुक़सान होगा? सारी जिम्मेदारी विष्णु की ही मानकर देवता उन्हीं पर विश्वास करने लगे।

क्षीरसागर पर मंदर पर्वत को मथानी के रूप में खड़ा करके महासर्प वासुकी को रस्से के रूप में लपेट कर समुद्र का मंथन करने का निर्णय हुआ। लेकिन मंदीर पर्वत को लाकर क्षीर सागर में डालना किसी के लिए मुमक़िन न था। विष्णु ने उन पर अनुग्रह करके यह काम संपन्न किया। इसीलिए वे गिरिधारी कहलाये।

राक्षसों ने वासुकी सर्प को सर के छोर से पकड़ने का हठ किया। विष्णु ने देवताओं को समझाया कि वे राक्षसों की बात मान लें। तब विष्णु ने भी सब के अंत में वासुकी की पूँछ के छोर को पकड़ लिया। इसके बाद क्षीर सागर को मथने का काम शुरू हुआ।

विष्णु पुराण तीसरा अध्याय समाप्त...

विष्णु पुराण चौथा अध्याय

क्षीर सागर मंथन के समय, राक्षस देवताओं का मज़ाक उड़ाते रहे और अपना पूरा भुज बल दर्शाते हुए सर्पराज को खींचते रहे। देवताओं ने अपने बल का पूरा-पूरा प्रयोग किया। उनके खींचने की इस प्रक्रिया में वासुकी महासर्प ने विष उगल दिया।

वह विष ज्वालाएं बिखेरना लगा। इन ज्वालाओं में कितने ही राक्षस जल गये। लग रहा था कि इस हलाहल से पूरा लोक ध्वंस हो जायेगा। उसी समय मंदर पर्वत भी समुद्र के अंदर डूब गया। सबने शिव से प्रार्थना की।

शिव ने हलाहल को निगल डाला और उसे कंठ में ही रोककर लोक की रक्षा की। वे गरल कंठ कहलाये गये। विपत्ति टली, पर पर्वत डूब गया। देवताओं ने विष्णु से प्रार्थना की।

विष्णु ने बड़े कच्छप के रूप में कूर्मावतार लिया और समुद्र में डूबे पर्वत को अपनी पीठ पर ढ़ोते हुए ऊपर ले आये।

कच्छप बनकर मंदर पर्वत को ढ़ोते हुए विष्णु ने बड़ी ही सावधानी बरती। पर्वताग्र पर बैठकर उन्होंने एक पांव से उसे दबाकर रखा, जिससे वह इधर-उधर न हिले-डुले। साथ ही देवताओं के साथ मिलकर वे समुद्र को मथने के काम में लगे रहे। यों विष्णु बहु रूपों मे दिखे।

सागर मंथन का काम सुचारु रूप से चलने लगा। क्षीर सागर से चंद्र, लक्ष्मी, कल्पवृक्ष, कामधेनु, ऐरावत हाथी, उच्चैश्रवा घोड़ा, सुरा नामक नशा व उत्तेजना प्रदान करनेवाला पेय और कितने ही पदार्थ उत्पन्न हुए।

शिव ने कंठ के हलाहल के ताप के उपशमन के लिए चंद्रमा को सिर पर धारण कर लिया और चंद्रशेखर बने।लक्ष्मी देवी ने श्रीवत्स कौस्तुभ मणियों की वैजयंतीमाला पहनाकर विष्णु से विवाह किया। विष्णु लक्ष्मीकांत बने। देवता सुरा पीकर सुर बने।

अंत में अमृत प्राप्त हुआ। आयुर्वेद के मूल विराट धन्वंतरी के रूप में अमृत कलश लिये, अनेक औषधियों को धारण किये, विष्णु पद्मासन पर आसीन हो, समुद्र से होते हुए प्रकट हुए।

अमृत के लिए जब क्षीर सागर मथा गया, तब प्रारंभ में हलाहल विष उत्पन्न हुआ। कितनी ही विशेषताओं के घटने के उपरांत और दैव सहायताओं के बाद अमृत प्राप्त हुआ, लक्ष्य की प्राप्ति हुई। इसीलिए श्रम से साधा जानेवाला काम "सागर मंथन कहलाता है और यह उसका पर्यायवाची शब्द बन गया।

धन्वन्तरी के हाथ में जो अमृत कलश था, उसे राक्षस उड़ा ले गये और दाबा किया कि यह हमारा ही है। राक्षसों और देवताओं में मुठभेड़ हुई। जब दोनों के बीच में यह छीना-झपटी हो रही थी, तब मंत्रमुग्ध कर देनेवाली जगन्मोहिनी वहाँ प्रत्यक्ष हुई। उसे देखकर राक्षस उसपर रीझ गये।

मोहिनी ने राक्षसों से कहा, "अमृत मुझे दो, मैं बांटूँगी । उसकी बातों में आकर राक्षसों ने कलश उसके सुपुर्द कर दिया । राक्षस एक तरफ़ बैठे तो देवता दूसरी तरफ़ । दोनों के बीच में कलश को कमर पर सटाये जगन्मोहिनी नृत्य करने लगी और अमृत बांटने को सन्नद्ध हो गयी । निश्चेष्ट होकर देवता एकटक उसी की तरफ़ देखने लगे । मदहोश राक्षस मोहिनी के सौंदर्य को देखते हुए तन्मय हो गये । उन्हें अपनी सुध नहीं रही ।

देवताओं को भी पहले यह ज्ञात नहीं था कि आख़िर यह मोहिनी है कौन, पर जब उन्होंने देखा कि वह देवताओं को ही अमृत पिला रही है और राक्षसों को छल रही है, तो वे जान गये कि मोहिनी कोई और नहीं, बल्कि साक्षात् विष्णु ही रस रूप पधारे । इसलिए वे चुपचाप अमृत पीते गये ।

जहाँ देवता निर्लिप्त होकर अमृत का सेवन करते हुए अमरत्व पा रहे थे वहाँ दैत्यों ने जगन्मोहिनी के मायाजाल में फंसकर उन्मत्त होकर अमरत्व खो दिया ।

राहु नामक एक होशियार राक्षस ने जान लिया कि जगन्मोहिनी राक्षसों को छल रही है। वह जल राक्षसी सिंहिका का पुत्र है । बड़ा ही मायावी है ।

जब उसने देखा कि सच्चाई बताने पर भी राक्षस सुनने और विश्वास करने की स्थिति में नहीं हैं तो उसने स्वयं देवता का रूप धारण किया और देवताओं की पंक्ति में बैठकर अमृत पी गया । सूर्यचंद्र ने उसकी यह धूर्तता देखी और उन्होंने मंदर पर्वताग्र पर आसीन बहुरूपी विष्णु को यह विषय सूचित किया । विष्णु ने अपना चक्र राक्षस को मार डालने भेजा ।

विष्णु के चक्र से बचने के लिए राहु ग्रहों में चक्कर काटता रहा और आखिर अंतरिक्ष में प्रवेश किया । चक्र ने वहाँ भी उसका पीछा किया और उसके सिर को धड़ से अलग कर दिया । अमृत की शक्ति के कारण सिर और धड़ सजीव ही रहे । सिर राहु और धड़ केतु के रूप में दो ग्रहों में परिवर्तित हुए और ग्रह-राशि में सम्मिलित हो गये ।

राहु केतु ग्रहों के कारण अब ग्रह नौ हो गये । राहु केतु सूर्य चंद्र पर बहुत क्रोधित थे, क्योंकि उन्हीं के कारण उसकी पोल खुल गयी । प्रतिकार की भावना से वे अमावस्या व पूर्णिमा के पर्व दिनों में उनपर छाने लगे और उन्हें पीडित करने लगे । यों सूर्य चंद्र ग्रहण बने ।

पूरा का पूरा अमृत देवताओं को पिलाकर मोहिनी अदृश्य हो गयी । राक्षसों को अपनी त्रुटि मालूम हो गयी । तब से लेकर वे विष्णु और देवताओं के कट्टर दुश्मन बन गये ।

अमृत मंथन के दौरान विष्णु ने कूर्मावतार, धन्वंतरी का अवतार तथा मोहिनी का अवतार धारण किया ।

धन्वंतरी अमृत के साथ-साथ औषधियाँ तथा औषधिवेद भी ले आये । वैद्य शास्त्र के अधिदेवता व वैद्यों के कुलदेव के रूप में धन्वंतरी की पूजा होने लगी । जगन्मोहिनी विश्वमोहिनी मानी जाने लगी और सौंदर्य व विलास का प्रतीक बनी ।

नारद जगन्मोहिनी अवतार की प्रशंसा करते हुए, जगन्मोहिनी राग को महती वीणा पर झंकृत करते हुए कैलास गये । पार्वती ने यह सुनकर नारद से कहा, “अधम और नीच राक्षसों को छलने मात्र से क्या जगन्मोहिनी कहलाने के योग्य हो जायेगी ।

हाँ माते, किसी को भी आनंद-सागर में डुबो देनेवाली – और अपने सौंदर्य व हाव-भावों से विश्व भर को अपने वश में कर लेनेवाली जगन्मोहिनी ही तो है, कहते हुए नारद वहाँ से चले गये ।

पार्वती ने यह बात शिव से बतायी । शंकर मुस्कुराते हुए चुप रह गये । बाद में पार्वती के साथ नंदी वाहन पर आसीन होकर वैकुंठ गये और विष्णु से कहा, “तुम्हारे जगन्मोहिनी अवतार को देखने की मेरी तीव्र आकांक्षा है । इसी उद्देश्य से यहाँ आया हूँ ।

संकट के निवारण के लिए कोई न कोई वेष धारण करना ही पड़ता है । तुम्हारे लिए भी यह बायें हाथ का खेल है, विष्णु यों कहते हु अंतर्धान हो गये ।

इतने में शिव ने जगन्मोहिनी को थोड़ी दूर पर फूलों की गेंद से खेलते और गाते हुए देखा । शिव सब कुछ भूल गये और उसके पास गये । पर जगन्मोहिनी उनके हाथ नहीं आयी और वह विश्व आकाश में घुस गयी । हाथ फैलाते हुए शिव उसका पीछा करने लगे । पार्वती स्तंभित होकर यह दृश्य देखती रह गयी ।

शिव मोहिनी के इस लीला विनोद को ब्रह्मा आदि देवता बड़े ही चाव से देखने लगे । नंदी निश्चेष्ट होकर देखता रहा । नारद महती वीणा पर शिवरंजनी राग को झंकृत कर रहे थे ।

आगे-आगे जगन्मोहिनी और पीछे-पीछे शिव दौड़ते हुए गये और कुछ ही समय में दोनों दिखायी नहीं पड़े । पार्वती कैलास पहुँच गयी ।

जगन्मोहिनी तेजमंडलों से होते हुए शिव को पूरे विश्व में घुमाया और कैलास पहुँची । शिव को उसे छूने से मना करती हुई जब वह पार्वती के पास जाने लगी तब शिव ने उसकी कमर पकड़ ली ।

देखा, आपका पतिदेव कितना नटखट है? कहती हुई भय के मारे वह पार्वती के पास खड़ी हो गयी ।

देखते-देखते जगन्मोहिनी पार्वती के सम्मुख विष्णु के रूप मे प्रकट हुई ।

भ्राते, आप विश्वमोहन जगन्मोहिनी केशवस्वामी हैं । यह सब कुछ शिव केशव लीला नाटक है । है न? पार्वती ने विष्णु से पूछा । “हाँ, हाँ, आपने ठीक कहा, कहते हुए वीणा बजाते नारद वहाँ आये । जगन्मोहिनी और शिवरंजनी राग में हरिहर की लीलाओं का गान करते हुए तीनों लोकों में विचरने लगे ।

शिव ने विष्णु से कहा, “अमृत भुलाकर राक्षस तुम्हारे जिस जगन्मोहिनी रूप को निहारने में मग्न हो गये, उसकी मैं प्रशंसा करता हूँ ।

रस पिपासा असुरों की धरोहर है ।

विष्णु ने मुस्कुराते हुए पर्वती से कहा, “कहीं ऐसा न हो, जब हमारी गंगा भविष्य में आकाश से पृथ्वी पर उतरने जा रही हो, तब तुम्हारे पतिदेव उसे कहीं तुम्हारी सौतन न बना लें। कहते हुए विष्णु अदृश्य हो गये।

इसके बाद काल क्रम में विष्णु ने कर्दम प्रजापति, देवहुति का पुत्र बनकर कपिलावतार लिया। बचपन से ही तपस्या करके ज्ञान संपन्न होकर कपिल महामुनि के नाम से प्रसिद्ध हुए।

कपिल ने अपनी माता देवहुति को अनेकों तत्वों का बोधन किया, जो सांख्ययोग के नाम से प्रसिद्ध हुए। जब कपिल महर्षि पाताल लोक में निर्विराम एक गुफ़ा में तपस्या कर रहे थे, तब पृथ्वी पर सगर सम्राट सौवाँ अश्वमेध यज्ञ करना चाह रहे थे। इंद्र ने यज्ञ के अश्व को उस गुफा में छिपा दिया, जिसमें कपिल महर्षि तपस्या कर रहे थे। सगर के हज़ार पुत्र घोड़े को खोजते हुए पाताल लोक में पहुँचे। वहाँ उन्होंने कपिल महर्षि की गुफा देखी। उन्होंने उन पर आरोप लगाया कि उन्होंने ही घोड़े की चोरी की और उनका तप-जप केवल ढ़ोंग है। कपिल ने आँखें जब खोलीं, तब सबके सब जलकर राख हो गये।

उन भस्म राशियों पर विष्णु पाद रखे गये और स्वर्ग में मंदाकिनी की तरह प्रवाहित हो रही गंगा को पृथ्वी पर ले आने के लिए सगर के प्रपौत्र भगीरथ ने घोर तपस्या की और गंगा को प्रसन्न किया। साथ ही गंगा के वेग को सह सकनेवाले शिव की तपस्या करके उन्हें भी प्रसन्न कर लिया।

गंगावतरण के समय गंगादेवी को देखकर शिव उसपर मुग्ध हो गये और उसे अपने जटाजूट में कसकर बांध लिया। फिर भगीरथ की प्रार्थना पर उसे थोड़ी मात्रा में बहने दिया। गंगा भगीरथ के साथ गयी और उसके पूर्वजों की भस्म राशियों पर प्रवाहित होकर उन्हें पुण्यलोक भेजा।

परमशिव गंगाधर बने और यों गंगा, पार्वती की सौत हुई। सनकनंदनादि मुनि कहलाये जानेवाले सनक, सनंद, सनत्सु, सनत्कुमार नामक चार मुनि ब्रह्मा के मानस पुत्र हैं। सदा वे बालक ही बने रहते हैं। विष्णु भक्ति में तत्पर होकर विष्णु का गुणगान करते हुए सभी लोकों में विचरते रहते हैं।

विष्णु के दर्शन करने वे वैकुंठ गये। सब द्वारों को पार करते हुए विष्णु मंदिर द्वार पर पहुँचे।

विष्णु के ही रूप के जय विजय वहाँ के द्वारपालक हैं। उनके चार-चार हाथ हैं। उन हाथों में चक्र, शंख, गदा व अभय मुद्राएँ हैं। उन दोनों ने मुनियों से कहा कि यह अंदर जाने का समय नहीं है।

तब सनकसनंदों ने कहा, “विष्णु दर्शन के लिए हमारी दृष्टि में कोई समय-असमय नहीं होता कहते हुए उनकी परवाह किये बिना जब वे अंदर जाने को उद्यत हो गये तब द्वारपालकों ने गदाएँ उठाकर उन्हें रोका।

सनकादि मुनियों ने उन्हें शाप देते हुए कहा, “तुममें विष्णु द्वारपालक बने रहने की योग्यता नहीं है। राक्षस होकर जन्म लोगे।

यह कोलाहल सुनकर द्वार खोलते हुए विष्णु, लक्ष्मी समेत वहाँ आये।

जय विजय ने मुनियों के शाप के बारे में उनसे बताया और अपना दुख व्यक्त किया । मुनिगण भी अपनी जल्दबाज़ी पर मन ही मन चिंतित हुए।

विष्णु पुराण चौथा अध्याय समाप्त...

विष्णु पुराण पांचवा अध्याय

भगवान विष्णु ने जय और विजय से कहा -"महा मुनियों का शाप झूठा साबित नहीं हो सकता। तुम दोनों मेरे प्रति मैत्री भाव रखते हुए सात जन्मों में तर जाना चाहते हो या मेरे साथ द्वेष करते हुए शत्रु बनकर तीन जन्मों तक मेरे हाथों मृत्यु को पाकर यहाँ पर आना चाहते हो?

इस पर जय और विजय ने तीन ही जन्मों के बाद विष्णु के सान्निध्य को पाने का वरदान माँग लिया। जय-विजय की कामना की प्रशंसा करते हुए सनकादि मुनियों ने विष्णु से कहा, "भगवान, हमने यह रहस्य अभी जान लिया कि आप की दृष्टि में राग-द्वेष दोनों बराबर हैं और जो लोग आप से द्वेष करते हैं वे आपके और निकट हो जाते हैं। आपके द्वारपालों को जल्दबाजी में हमने शाप दिया; हम अपनी करनी पर पछता रहे हैं। कृपया हमें क्षमा कीजिये। इसके बाद वे लक्ष्मी नारायण की स्तुति करते हुए वहाँ से चले गये।

इसके बाद जय और विजय कश्यप प्रजापति की पत्नी दिति के गर्भ से हिरण्य कश्यप और हिरण्याक्ष के रूप में पैदा हुए।

वे दोनों भाई बड़े पराक्रमी बन गये। घोर तपस्या करके ब्रह्मा को प्रसन्न कर उन से वरदान प्राप्त किये और विष्णु के प्रति द्वेष करने लगे।

हिरण्य कश्यप ने राक्षसों का राजा बनकर विष्णु का सामना करने का निश्चय किया। हिरण्याक्ष ने विष्णु को कुपित करने के लिए अनेक अत्याचार किये और पृथ्वी को लुढ़काते-लुढ़काते रसातल समुद्र में ढकेल दिया। पृथ्वी रसातल समुद्र में डूब गई। भूदेवी ने विष्णु की स्मृति करके अपना उद्धार करने की प्रार्थना की।

विष्णु ने भूदेवी पर अनुग्रह करके दशावतारों में से तीसरा वराहावतार लिया।

ब्रह्मा के होम करते समय यज्ञ कुंड से शुभ्र कांति मंडित एक कण निकल आया और बढ़ते-बढ़ते उसने जंगली सूअर का रूप धारण कर लिया। उस सूअर को विष्णु का अवतार मानकर ब्रह्मा आदि देवताओं ने यज्ञ वराह, श्वेत वराह और आदि वराह के रूप में उनकी स्तुति की।

यज्ञ वराह ने बढ़ते-बढ़ते विशाल रूप धारण कर लिया। उसके पैर बलिष्ठ थे, उसका चर्म इस्पात जैसा कठोर था, वज्र जैसे उसके जबड़े थे, उसकी आँखों से अरुण कांति आ रही थी। उसके रोएँ स्वर्ण जैसे चमक रहे थे । वह सारे विश्व को गुँजाते हुए हुँकार कर उठा। उस के माथे पर खड्ग जैसा सींग दमक रहा था।

वराहावतार तेज गति से रसातल की ओर दौड़ पड़ा। उसकी गति से सारी दिशाएँ हिल उठीं। प्रलय कालीन आंधी चलने लगी।

यज्ञ वराह ने रसातल समुद्र के भीतर डूबी हुई पृथ्वी को अपने सींग से ऊपर उठाया।

उसी समय हिरण्याक्ष ने वरुण पर हमला करके युद्ध के लिए उसे ललकारा।

वरुण ने कहा-"तुमको तो मेरे साथ युद्ध करना नहीं है, तुम तो महान वीर हो। इसलिए तुम्हें पृथ्वी को ऊपर उठाने वाले परम शक्तिशाली यज्ञ वराह के साथ युद्ध करना होगा। इसपर वह तत्काल यज्ञ वराह से जूझ पड़ा।

वराह रूपधारी विष्णु के साथ हिरण्याक्ष पराक्रमपूर्वक लड़ते हुए विष्णु के गदा को उड़ा कर ताल ठोकता हुआ खड़ा हो गया। विष्णु ने उसके युद्ध-कौशल की प्रशंसा की और उन्होंने फिर से गदा को अपने हाथ में धारण किया। इसके बाद उन दोनों के बीच भयंकर संग्रम छिड़ गया। अंत में वराहावतार ने अपने सींग के वार से हिरण्याक्ष को मार डाला।

वराहावतार-रूपधारी विष्णु को भूदेवी ने वर लिया। वराहमूर्ति ने भूदेवी को उठा कर अपनी जांघ पर बिठा लिया। ब्रह्मा आदि देवताओं ने उन पर फूलों की वर्षा की और जगपति के रूप में अनेक प्रकार से उनकी स्तुति की।

वराहवतार लेकर अपने छोटे भाई का वध करनेवाले विष्णु से बदला लेने के संकल्प से हिरण्य कश्यप ने ब्रह्मा से वरदान प्राप्त करना चाहा। इस विचार से वह ब्रह्मा को प्रसन्न करने के लिए तपस्या करने चला गया। उस समय उसकी पत्नी लीलावती गर्भवती थी।

लीलावती के गर्भ को विच्छिन्न करने के लिए इन्द्र ने मायाजाल रचा और उस को बन्दी बनाकर आकाश मार्ग में ले जाने लगे। उस वक्त नारद उन से मिल कर बोले-"इन्द्र! आप कैसा अन्याय करने जा रहे हैं! आप अपने प्रयत्न को छोड दीजिए। सदा सर्वदा हिरण्य कश्यप ईर्ष्यावश विष्णु का स्मरण किया करता है, इस कारण लीलावती के गर्भ में बढ़नेवाले शिशु को विष्णु का स्मरण करने की आदत पड़ गई है। विष्णु के प्रति हिरण्य का द्वेष उस शिशु के अन्दर भक्ति के रूप में परिणत हो गया है। लीलावती महान विष्णुभक्त को जन्म देने वाली है। इसलिए आप लीलावती को मुक्त करके अपने धाम को चले जाइये। यों समझा कर नारद लीलावती को अपने आश्रम में ले आये।

आश्रम में नारद दार्शनिक बातों के साथ-साथ विष्णु के गुणों का भी वर्णन करते जाते थे। उस समय लीलावती के गर्भ में स्थित शिशु बड़े ध्यान से सुना करता था। कालांतर में लीलावती ने एक पुत्र को जन्म दिया।

हिरण्य कश्यप ने घोर तपस्या करके ब्रह्मा को प्रसन्न किया। ब्रह्मा ने उसे वर मांगने को कहा। इस पर उसने ऐसे अनेक वर मांगे, जिनके कारण उसकी मृत्यु पृथ्वी या आकाश, दिन या रात, घर या बाहर, पशु या मानव, देवता या किसी अन्य प्राणी के द्वारा न हो। साथ ही सृष्टि के किसी जीवधारी के द्वारा भी उसकी मृत्यु न हो! ऐसे अनेक वर उसने ब्रह्मा से प्राप्त किये।

ब्रह्मा से वर पाकर हिरण्य कश्यप जब विजय-गर्व से लौट रहा था, तो रास्ते में नारद से सारा वृत्तांत सुनकर उनके आश्रम में पहुँचा और अपने पुत्र का नाम प्रह्लाद रखा। इसके बाद पत्नी और पुत्र के साथ राजधानी लौट गया।

हिरण्य कश्यप ने सब से पहले इन्द्र से बदला लेना चाहा। उसने स्वर्ग पर हमला करके इन्द्र के सिंहासन पर अधिकार कर लिया। सारी दिशाओं पर विजय प्राप्त करके दिग्पालों को अपने अधीन कर लिया। देवताओं को खूब सताया। जब शचीदेवी का अपमान करना चाहा, लीलावती ने उसको रोका। फिरभी उसका क्रोध जब शांत न हुआ तो उसने मुनियों के आश्रमों को जला दिया। विष्णु के भक्तों पर अत्याचार करना प्रारंभ किया। अंत में विष्णु का सामना करना ही अपना लक्ष्य मान कर उनको भड़काने की कोशिश करने लगा। फिर भी विष्णु से कहीं उसकी मुलाकात न हुई। अंत में वह वैकुण्ठ पर चढ़ाई कर बैठा। वहाँ पर भी विष्णु उसे दिखाई नहीं दिये।

“मुझ से डर कर विष्णु कहीं अदृश्य रूप में छिपे हुए हैं। कायर कहीं के! ऐसा कहते हुए हिरण्य कश्यप अपनी राजधानी को लौट आया।

प्रह्लाद उम्र के बढ़ने के साथ विष्णु का ध्यान करने लगा। हिरण्य कश्यप यह सोच कर चिंता में डूब गया कि ऐसा वंशद्रोही उसके यहाँ कैसे पैदा हो गया। प्रह्लाद का विद्याभ्यास कराने के लिए हिरण्य कश्यप ने उसको अपने गुरुपुत्र चण्ड और मार्क के हाथ सौंप दिया।

प्रह्लाद ने गुरु कुल में हरि का ध्यान करते हुए अपनी विद्या समाप्त की। अपने सहपाठियों में भी विष्णु भक्ति का प्रचार करके उनके मन में मुक्ति मार्ग के प्रति अभिरुचि पैदा कर दी।

विद्या की समाप्ति पर चण्ड और मार्क प्रह्लाद को हिरण्य कश्यप के हाथ सौंपने के लिए आये। हिरण्य कश्यप ने अपने पुत्र को प्रेम से जांघ पर बिठाया और पूछा-“बेटा, तुम अपनी विद्या का परिचय कराने वाला एक पद्य सुनाओ!

प्रह्लाद ने अपने मधुर कंठ से एक पद्य गाकर सुनाया, जिसका अर्थ था – “मैं ने अपने गुरुजी से सारी विद्याएँ पूर्ण रूप से सीख ली हैं! उन सभी विद्याओं में श्रेष्ठ विद्या विष्णु के प्रति चित्त लगाना है। विष्णु का स्मरण करने से प्रत्येक व्यक्ति का जन्म सार्थक हो जाता है।

प्रह्लाद के मुँह से ये बातें सुनकर हिरण्य कश्यप क्रोध से कांप उठा और उसको अपनी जांघ पर से नीचे ढकेल दिया। तब गुरुओं से पूछा-“क्या आप ने हमारे पुत्र को यही शिक्षा दी है?

चण्ड और मार्क दोनों थर-थर कांपते हुए बोले-“राजन, इसमें हमारा कोई दोष नहीं है! आप हम पर नाराज़ न होइए। ऐसा कहते हुए गुरुकुल में प्रह्लाद के व्यवहार का परिचय दिया।

हिरण्य कश्यप ने अपने पुत्र को समझाया, “विष्णु ने सूअर का रूप धर कर तुम्हारे चाचा का संहार किया है। वह हमारे राक्षस कुल का परम शत्रु है! विष्णु का स्मरण करना हमारे वंश का अपमान करना है! वह अक्षम्य अपराध है। तुम उसका स्मरण करना छोड़ दो।